सांगीतिक मुद्रण एवं प्रकाशन

डॉ0 इभा सिरोठिया
एसोसिएट प्रोफेसर एवं सं0 गायन
आर्यकन्या डिग्री कॉलेज
इलाहाबाद

वेद मंत्रों के उच्चारण में वैदिक काल से ही भारतीय संगीत का ईश्वर प्राप्ति का सशक्त साधन माना जाता रहा है। वैदिक सिद्धान्तों के अनुसार ऋषि मुनियों द्वारा ज्ञान प्रदान करने की प्रक्रिया में सुनने को श्रुति तथा समझने और संग्रह करने को स्मृति कहा गया है। उपनिषद काल में साधक ने आत्मज्ञान की प्राप्ति के लिए ऊंकार नाद को पहचाना तथा ऊंकार से सम्बद्ध होकर संगीत नाद ब्रह्म तथा ब्रह्मानंद सहोदर की प्रतिष्ठा को प्राप्त हुआ इस सभी तथ्यों से अवगत कराने का कार्य हमारे मनीषियों की लेखनी ने किया। किन्तु उस काल के तथ्यों को जानने का आधार केवल तत्कालीन आचार्यो के ग्रंथ है। जो कि भोजपत्र पर लिखे जाते थे। प्राचीन काल में ताली पत्र और भुर्जपत्र पर लेखन एवं उसके माध्यम से ज्ञान संरक्षण की परम्परा का सूत्रपात हुआ, कागज के आविष्कार एवं प्रिंटिंग प्रेस से संगीत ही नहीं वरन् शिक्षा के अन्य क्षेत्रों में भी क्रांति आयी। उस समय चूंकि प्रकाशन एवं मुद्रण की सुविधा नहीं थी अतः जीर्ण शीर्ण पाण्डुलिपियों तथा उनके लुप्त भाग के लिए अनुमान का ही आधार लिया जाता था। अतः प्राचीन काल में हमारी गायन, वादन अथवा नृत्य शैली का वास्तविक स्वरूप क्या था इससे हम आज भी अनभिज्ञ हैं।

ज्ञान विज्ञान की विभिन्न शाखाओं में पुरातन काल से अद्यतन काल तक के क्रमिक विकास का अध्ययन ग्रंथों द्वारा ही प्रमाणिक रूप में उपलब्ध होता है। मानव सभ्यता ग्रंथों की सर्वाधिक ऋणी है। इतिहास ग्रंथ युगीन घटनाओं और उनके प्रभावों का संकलन है।

भारतवर्ष पर समय–समय पर अनेक जातियों के आक्रमण हुए जिनमें मुसलमान तथा अंग्रेजी जातियों ने अधिक समय तक राज्य किया। मुस्लिम राज्यकाल में भारतीय संगीत ने अपने स्वर्णयुग को देखा तो उसका निम्नतम काल भी यही रहा। इस काल में भी हमारे देश में मुद्रण एवं प्रकाशन की सुविधा न हो पाई। अतः संगीत को भी उसी स्थिति में रह जाना पड़ा। हस्तलिखित पाण्डुलिपियाँ ही उस समय के गीत संगीत को जानने का आधार है। वर्तमान समय में शायद ही कोई वयोवृद्ध संगीतकार हो जो यह दावे के साथ कह सके कि तानसेन की बंदिशों का वास्तविक रूप क्या था ? इसका एकमात्र कारण यही था कि उस समय संगीत को कलमबद्ध करके मुद्रण और प्रकाशन द्वारा सुरक्ष्द्वात करने का उपाय न था।

यद्यपि अंग्रेजों ने हमारे देश को अपूरणीय क्षति पहुॅचायी किन्तु प्राचीन ग्रन्थों प्राचीन परम्पराओं ताि प्राचीन संगीत के शोध कार्य के लिए अंग्रेजों के साथ आए जर्मन तथा फ्रांसीसी विद्धानों ने अथक परिश्रम करके उसे जीवित रखने का प्रयत्न भी किया ।

इक्कीसवीं शताब्दी एवं संचार क्रांति के इस वर्तमान युग में अन्य विषयों की भाँति संगीत साहित्य का भी प्रचुर मात्रा में प्रकाशन हो रहा है। संगीत की संस्थागत शिक्षण प्रणाली निरन्तर अग्रसर हो रही है इस क्रम में पुस्तकों का तथा पत्र पत्रिकाओं का मुद्रण एवं प्रकाशन हो रहा है।

आधुनिक काल में भी संगीत से संबंधित पुस्तकों, ग्रंथों, समाचार पत्र सीमित मात्रा में ही उपलब्ध हैं। भारत में शिक्षा संस्थाओं के माध्यम से संगीत की शिक्षा का प्रारम्भ अधिकतम 125 वर्ष पुराना माना जा सकता है। विश्वविद्यालयों के अन्तर्गत संगीत विभागों की स्थापना और निश्चित पाठ्यक्रम के अनुसार निश्चित समय में संगीत के शिक्षण व परीक्षा–प्रणाली के द्वारा मूल्याकंन का प्रारम्भ तो अधिक से अधिक 5 वर्ष पूर्व हुआ ऐसा कहा जा सकता है।[1]

देश में गिने चुने संगीत प्रकाशन केन्द्र हैं जो कि संगीत की पुस्तकों, पत्रिकाओं आदि का प्रकाशन करते हैं। जैसे– हाथरस का संगीत कार्यालय, इलाहाबाद का संगीत सदन, पाठक पब्लिकेशन इनके अतिरिक्त सरकार द्वारा छायानट संगना आदि संगीत विषयक प्रकाशन हैं।

पत्रकारिता एक कला है जिस तरह संगीत का प्रत्येक विद्यार्थी शिक्षक अथवा कलाकार नहीं बन सकता ठीक उसी प्रकार प्रत्येक पढ़ा लिखा व्यक्ति पत्रकार अथवा लेखक नहीं बन सकता। पत्रकारिता के लिए प्रभावशाली लेखन के साथ–साथ कुछ विशिष्ट गुण जैसे गुणों की अनिवार्यता होती है जिनमें संबंधित विषय का ज्ञान, दूसरों के भावों को समझ कर उन्हें व्यक्त करने की क्षमता, निर्भीकता एवं निरपेक्ष दृष्टिकोण समृद्धशाली भाषा शैली, भाषा व्याकरण का पर्याप्त ज्ञान, भाषा प्रवाह का ज्ञान ।

हम सभी जानते हैं कि वर्षो से कला को समाज का दर्पण मानने की परिपाटी चली आ रही है और यह अकाट्य सत्य है। किन्तु मेरे विचार से इस दर्पण के भी दर्पण होते हैं – समाचार पत्र, पत्रिकाएं, पुस्तकें एवं अन्य संचार संसाधन ।

उदाहरण हेतु किसी कलात्मक प्रस्तुति या विचार संगोष्ठी को देखने अथवा सुनने के लिए आयोजन के स्थल पर तो एक निश्चित सीमा में ही लोग एकत्रित हो पाते हैं, किन्तु उस प्रस्तुति द्वारा जो भी सन्देश दिया जाता है उसे ये पत्र पत्रिकाएं तथा संचार संसाधन पूरे देश में एक ही समय में सम्प्रेषित करने में समर्थ होते हैं।

मद्रण प्रणाली (प्रिटिंग प्रेस) की सुविधा ने संगीत जगत् को एक नई दिशा प्रदान की जिससे संगीत सम्बन्धी प्रचुर सामग्री मुद्रित रूप में उपलब्ध होने लगी। इससे कलाकारों की शिक्षा देने वाली

प्रणाली भी प्रीाावित हुई। अब वैज्ञानिकता ने घरानों की अपनी शैलीगत विशेषताओं और अपनी गायकी को पुस्तकों के माध्यम से जन–साधरण को उपलब्ध कराना आरम्भ कर दिया जिससे साधरण व्यक्ति भी घरानेदार गायकी से परीचित होने लगे।[2]

ऐसा देखा जाता है कि संगीत के विद्यार्थियों में कुछ विद्यार्थी प्रयोगात्मक पक्ष में अपनी प्रतिभा अधिक प्रदर्शित करते हैं और कुछ सैद्धान्तिक पक्ष में आगे रहते हैं। संगीत के सैद्धान्तिक पक्ष में वही विद्यार्थी आगे रहते हैं जो पढ़ने में भी मेधावी होते हैं। ऐसे मेधावी विद्यार्थी संगीत के मुद्रण तथा प्रकाशन के बारे में ज्ञान प्राप्त करके उसे आजीविका का साधन बना सकते हैं। वैसे तो कोई भी व्यक्ति मुद्रण और प्रकाशन को जीविकोपार्जन का साधन बना सकता है।

अनेक विषयों जैसे संगीत एवं मनोविज्ञान, संगीत से मानसिक चिकित्सा, संगीत का वनस्पति पर प्रभाव, संगीत की पशु–पक्षियों पर प्रभाव इत्यादि पर शोध प्रबन्ध लिखे जा रहे हैं। अच्छे शोध–प्रबन्ध भी प्रकाशित हो रहे हैं। इस बात को नकारा नहीं जा सकता कि शास्त्र के महत्व को भी विद्वानों ने समझा है। जितना भी लेखन का कार्य हो रहा है हमारी भावी पीढ़िया अवश्य ही लाभान्वित होगी।[3]

संगीत के मुद्रण के लिए सांगीतिक योग्यता की आवश्यकता है क्योंकि बिना सांगीतिक समझ के उसके तकनीकी शब्दों, स्वरलिपियों अथवा ताल चिन्हों का प्रकाशन सम्भव नहीं। उदाहरण के लिए यदि तार सप्तक के स्वर चिन्ह के स्थान पर मन्द्र सप्तक का चिन्ह लगा दिया जाए तो स्वरलिपि में अमूलचूल परिवर्तन हो जाएगा जबकि सामान्य व्यक्ति के लिए वहाँ केवल एक बिन्दु रखना या हटाना है।

संगीत के प्राचीन ग्रन्थ अधिकांशतः संस्कृत में है यद्यपि उन ग्रंथों पर कुछ कार्य हुआ है तथापि संस्कृत के कुछ ऐसे ग्रंथ है जिनमें संगीत सम्बन्धी महत्वपूर्ण वर्णन है। अतः ऐसे ग्रंथों को प्रकाशित करके उसे संगीत के शोधार्थियों तथा संगीत प्रमियों के समक्ष रखने का कार्य मुद्रण एवं प्रकाशन के द्वारा ही किया जा सकता है। यद्यपि संगीत सम्बन्धी मुद्रण एवं प्रकाशन के लिए प्रशिक्षण की भी आवश्यकता है। यदि संभव हो तो ये प्रशिक्षण हमारे प्रतिष्ठित संगीत प्रकाशन केन्द्रों पर दिया जा सकता है। इन सांगीतिक प्रकाशनों को प्रशिक्षण केन्द्र के रूप में सर्व सुलभ बनाने संगीत विषय में हितकर होगा।

भारतीय संगीत पर प्राचीन काल से लिखे गये अमूल्य ग्रन्थों तथा नवीन लेख और पुस्तकों को आधुनिक समय में जन सामान्य तक पहुँचाने के लिए अनेक मुद्रण और प्रकाशन सम्बन्धित कार्यो का निष्पादन आधुनिक काल में अधिक रूप में हुआ। जिनमें पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे जी ने संगीत के प्रति अपने अगाध प्रेम को संगीत के विकास के माध्यम से दर्शाया। जिसके लिए उन्होंने संगीत

पर पुस्तकों का लेखन के साथ प्राचीन ग्रन्थों की प्रतिलिपियाँ भी मुद्रित कर प्रकाशित की। पं0 जी ने अनेकोनेक रागों की स्वर लिपियों का लेखन तथा प्राच्च स्वरलिपियों का संग्रह कर क्रमिक पुस्तक मालिका के रूप में रखा सर्वसम्मुख।

इसी क्रम में पं0 विष्णु दिगम्बर प्लुस्कर जी का योगदान अतुल्नीय है। प्लुस्कर जी ने अनेकों पुस्तकों जैसे संगीत बालबोध, संगीत तत्वदर्शक, राग प्रवेश, भारतीय संगीत लेखन पद्वति आदि पुस्तकों के लेखन के साथ पुस्तक मुद्रण के लिए स्वयं के मुद्रणालय की स्थापना की। "अनेक ग्रंथों के पठन–पाठन, चिंतन मनन और संगीत शिक्षाविदों तथा कालजयी कलाकारों से अनेक दौर की गम्भीर संगीत शिक्षण की समस्याओं पर बातचीत एवं वर्तमान सामाजिक परिवेश में सम्बन्धित समस्याओं का निरीक्षण करने शिक्षण पद्धति के स्तर का निर्धारण तथा उसमें सुधार की सम्भावनाओं पर विचार करने से ज्ञात होता है कि अतीत के कालक्रम में संगीत शिक्षण प्रक्रिया समय–समय पर अनुकूल या विपरीत परिस्थितियों से प्रभावित होते हुए भी निरन्तर प्रवाहित होती रही है और प्रमुख या गौण रूप में समाज को किसी न किसी रूप में लाभान्वित करती रही है।"[4]

वर्तमान तकनीकी रूप से धनी युग में हमारे पास सूचनाओं एवं तकनीकी सुविधाओं का पर्याप्त भण्डार है। वो सब उपलब्ध है जिसकी हमसे दो पीढ़ी पूर्व के संगीत शिक्षार्थियों ने शायद कल्पना भी नहीं की होगी। आवश्यकता केवल इन संसाधनों की सही जानकारी एवं सदुपयोग की है। महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में पत्रकारिता में अल्पकालीन कोर्स की वर्तमान समय में व्यवस्था भी सुलभ है। जिसकी सहायता से संगीत सम्बन्धी पत्रकारिता में रूचि रखने वाले व्यक्ति अपनी रूचि और भी अनुशासित व विशिष्ट रूप प्रदान कर सकते हैं। पत्रकारिता के क्षेत्र में वर्तमान समय में, संगीत के जानकार बहुत कम हैं। जबकि इस क्षेत्र में संगीतज्ञ पत्रकारों की बहुत आवश्यकता प्रतीत होती है। अपने संगीत का वास्तविक एवं प्रमाणिक स्वरूप जन–साधारण तक उन्हीं लेखों से पहुँच सकता है, जो विषय के विशेषज्ञ द्वारा लिखा गया हो। संगीत से अनभिज्ञ पत्रकारों से ऐसी अपेक्षा करना कदापि तर्कसंगत नहीं है। संगीत शिक्षार्थियों की पत्रकारिता का क्षेत्र नवीन अवश्य लग सकता है किन्तु यथोचित प्रशिक्षण प्राप्त करने के पश्चात् यदि वे इस क्षेत्र में पदार्पण करें तो निश्चय ही उनका स्वागत होगा। कुशल संगीत पत्रकार एवम् समालोचक के रूप में ऐसे योग्य व्यक्तियों की उन्नति का मार्ग सदैव खुला है।

संदर्भ सूची

1– संगीत संचयन

सुभद्रा चौधरी

पृ0सं0 32

2– भारतीय संगीत कीर मीडिया और संस्थानों का योगदान –

डॉ0 राधिका शर्मा

पृ0सं0 176

3– शास्त्रीय संगीत की लोकप्रियता में सांगीतिक संस्थाओं का महत्व

डॉ0 भावना रानी

पृ0सं0 98

4– संगीत शिक्षण के विविध आयाम

डॉ0 कुमार ऋषितोष

पृ0सं0 269